हिन्दी साहित्य में मानवाधिकार चेतना

Sangita Pathak*

Deen, Art Faculty, Rabindranath Tagore University, Bhopal (M.P.) India

सारांश *- भूमंडलीकरण के इस युग में साहित्य और साहित्यकार की भूमिका बढ़ जाती है। वर्तमान में जब प्रतिस्पर्धा, व्यक्तिगत होड़ और वंर्चस्व की लड़ाई जोरों पर है तब साहित्य का दायित्व गहरा हो जाता है। व्यापक मीडिया प्रचार-प्रसार सूचना क्रांति हाईटेक जीवन शैली, घराना संस्कृति आज आधुनिकता का पर्याय बन गयी है। इन सब परिवर्तनों में 'मानव/इंसान'/व्यक्ति कहीं तृस सा होकर हाशिये पर आ गया है। प्रश्न यह उठता है कि क्या ये स्थिति वर्तमान की देन है। तो ऐसा नहीं है बल्कि लक्ष्मी और सरस्वती के मध्य, अधिकार और कत्र्तव्यों के बीच, शोषक और शोषित के मध्य धनी और निर्धन के बीच, गहरी रेखा हर युग में स्पष्ट दिखाई दी है। हमारा साहित्य इस बात का गवाह है कि सदियों से समाज में अधिकारों के प्रति मानव का स्वर मुखर हुआ है।गीता, रामायण, महाभारत से लेख आधुनिक साहित्य तक में मानवाधिकारों के प्रति चेतना का स्वर दिखाई देती है।*

मुख्यशब्द- *चेतना, प्रतिस्पर्धा, लोक कल्याण, दुरूपयोग, शोषण, हनन।*

प्रस्तावना

मानवाधिकारों के प्रति चेतना का सीधा संबंध मानवीय मूल्यों और संवेदनाओं से है। प्रेम, भाई चारा, सम्भाव, सद्भाव, समानता, सहिष्णुता इत्यादि इसके पोषक तत्व है। समय व परिस्थितियों में परिवर्तन के साथ ही मानवीय मूल्यों के प्रति चेतना के स्तर में परिवर्तन होता रहा हैं। परिवर्तन का दायरा सामाज, राष्ट्र और राष्ट्र के बाहर तक विस्तारित हुआ। भारतीय जनमानस में आदिकाल से सर्वे भवन्तु सुखिनाः, अनेकता में एकता जैसी दार्शनिक सोच एवं प्रवृत्तियों का प्रभाव रहा। अतः सबकी धार्मिक स्वतंत्रता, आर्थिक स्वतंत्रता, वाणी की स्वतंत्रता इत्यादि को महत्व दिया गया। सही स्वतंत्रता मानवाधिकारों की विशेष धुरी भी है। प्रसिद्ध दार्शनिक ग्रीने स्वतंत्रता के पक्ष में कुछ इस प्रकार अपनी बात रखते है कि ''मानवीय चेतना अपने विकास हेतु स्वतंत्रता चाहती है, स्वतंत्रता अधिकारों में निहित है।''

विष्व भर के प्रत्येक धर्म, समुदाय के साहित्यिक ग्रन्थों में मानवाधिकरों के प्रति चेतना दिखाई पडती है। बाइबिल, कुरान-शरीफ, वेद, रामायण, गीता के साथ जैन, बौद्ध सिक्ख सभी धर्मो के ग्रंथों में भी मानवाधिकार की भावना व अवधारणा प्ररिलक्षित होती है।

साहित्यकार का साहित्य सार्वभौमिक होता है। समय परिसिथति, काल, के चक्रों से निकला साहित्य समाज की कोमल, कठोर भावनाओं के साथ सत् के चिंतन और खोज से जुड़ा होता है। भूमंडलीकरण के इस युग में साहित्य और साहित्यकार की भूमिका बढ़ जाती है। वर्तमान में जब प्रतिस्पर्धा, व्यक्तिगत होड़ और वंर्चस्व की लड़ाई जोरों पर है तब साहित्य का दायित्व गहरा हो जाता है। व्यापक मीडिया प्रचार-प्रसार सूचना क्रांति हाईटेक जीवनशैली, घराना संस्कृति आज आधुनिकता का पर्याय बन गयी है। इन सब परिवर्तनों में 'मानव/इंसान'/व्यक्ति कहीं लृप्त सा होकर हाशिये पर आ गया है। प्रश्न यह उठता है कि क्या ये स्थिति वर्तमान की देन है। नहीं ऐसा नहीं है दरअसल बल्कि लक्ष्मी और सरस्वती के पुत्रो के मध्य, अधिकार और कत्र्तव्यों के बीच, शोषक और शोषित के मध्य, धनी और निर्धन के बीच, गहरी रेखा हर युग में स्पष्ट दिखाई दी है। हमारा साहित्य इस बात का गवाह है कि सदियांे से समाज में अधिकारों के प्रति मानव का स्वर मुखर हुआ है। मानवधिकारों के प्रति चेतना एवं लोक कल्याण के लिए साहित्य की धारा सदा नीरा रही है। वैदिक साहित्य, संस्कृत, पाली, प्राकृत, उपभ्रंश प्रत्येक साहित्य ने सर्वजन सुखार्थः सर्वजन हितार्थ की भावना की विकास किया। एक और अमीर खुसरों से लेकर तुलसी, सूर जायसी कबीर, मीरा, रैदास आदि ने जहाँ मानवीय मूल्यों की स्थापना में विषेष योगदान दिया वहीं दूसरी ओर बाबू हरिश्चंद्र, मुंशी प्रेमचंद, निराला, मुक्ति, बोध, रघुवीर सहाय, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, धूमिल कुंवर नारायण आदि ने शोषण मुक्त समाज की अवधारणा का साहित्य के माध्यम से विस्तार किया ।

साहित्य की प्रत्येक विधा में बड़ी संवेदनषीलता से मानव और उससे जुड़े मूलभूत अधिकारों के समर्थन के साथ, मानवाधिकारों के हनन और मानवीय संवेदनाओं के गिरते, स्तर के चिंता के साथ अत्याचारों के खिलाफ भी व्यापक स्तर पर उल्लेखनीय कार्य हुआ। भारतेन्दु हरिश्चंद्र के काल में अंग्रेजों के जुल्म, किसानों के अधिकार के साथ मुक्ति के लिए संघर्ष का साहित्य रचा गया। द्विवेदी युगीन साहित्य में युगीन एवं परिस्थितिजन्य नैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृति मानवाधिकारों पर सृजन अधिक किया गया। छायावादी कवि निराला ने महिला मजदूर की दशा को 'वह तोड़ती पत्थर'रचना के माध्यम से बड़ी मार्मिकता से प्रकट किया है। दिनकर समानता व मानवतावादी स्वर को षब्द देते हुए कहते है। कि शांति नही तब तक जब तक सुख भाग न नर का सम हो, नहीं किसी को बहुत अधिक हो नहीं किसी को कम हो, जब तक मनुज-मनुज का यह सुख भाग नही सम होगा, शमित न होगा कोलहाल, संघर्ष नहीं कम होगा,। (कुरूक्षेत्र, दिनकर, पृष्ठ **87**)

नागार्जुन जन सामान्य की मानवधिकारा चेतना की बात पुरजोर तरीके से रखते हैं वे कहते है ''आधी जनता जनता भूखी है ये आजादी झूठी है।'' धनाड़यों की विषम और जटिल मानसिकता पर दिनकर की घनी भूत पीड़ा इस तरह थी-

''श्वानों को मिलता दूध वस्त्र भूखे बालक
अकुलाते है।

माँ की हड्डी से चिपक ठिठुर जोड़ की रात बिताते है।''

व्यंग्य और तिखे लहजे के साथ नागार्जुन शोषित वर्ग को चुनौति देते हुए कहते है कि

कच्ची हजम करोगे पक्की हजम करोगे।

चूल्हा हजम करोगे, चक्की हजम करोगें?

आर्थिक असमानता और पूंजीपती वर्ग को ललकारते हुए निराला कहते हैं अबे सुन बे गुलाब, मत भूल पाई जो खुषबु रंगो-आब खून चूसा तूने खाद का अषिष्ट डाल पर इतरा रहा है केपिटलिस्ट।'

सुमित्रानंदन पंत पूजीपतियों की निंदा करते हुए, किसानों के पक्ष में खड़े होकर उन्हें भविष्य का मार्ग प्रशस्त्र करने वाला नवीन परिवर्तनों का संवाहक तक कहते है।

विश्व विवर्तनशील, अपरिवर्तित वह निश्चल,

वहीं खेत,ग्र ह-द्वार वही, कृपण,स्वात्रित परपीड़ित

अति निजस्व प्रिय, शोषित, लुंठित, दलित, क्षुधार्दित (युग वाणी)

राष्ट्र कवि दिनकर मानवाधिकारों की चेतना को प्रज्वलित करते हुए कहते हैं कि

हीनता हो स्वत्व कोई और तू।

त्याग तप से काम ले यह पाप है''

पुण्य है विच्छिन्न कर देना उसे ।

बढ रहा तेरी तरफ जो हाथ हो।।

मानववाधिकार विरोधी ताकतों का उन्हीं के तरीके से जबाबमें दिनकर का कुरूक्षेत्र कहती है कि -ब्रम्हमा से कुछ लिखा भाग्य में मनुज नही लाया हैं।

अपना सुख उसने अपने, भुजबल से ही पाया है।

भाग्यवाद आवरण पाप का और शस्त्र शोषण का

।

जिससे रखता दबा एक जन भाग दूसरे जन का।

व्यक्ति से दूसरे के बीच की बढती दूरियाँ मानवीय मूल्यों के पतन का कारण है। दिनकर कहते है-

एक नर से दूसरे नर के बीच का व्यवधान।

तोड़ दे जो बस वही ज्ञानी, वही विद्वान।

कबीर दास जी ने भी इसी भावना को व्यक्त कर 'ढाई आखर प्रेम' को महत्व दिया है। धुमिल अपनी ओजस्वी वाणी में मानवधिकारों की संवेदनओं को व्यक्त करते हुए कहते हैं कि एक आदमी रोटी बेलता है, एक आदमी रोटी खाता है एक तीसरा आदमी भी है जो न रोटी बेलता है न रोटी खाता है, वह सिर्फ रोटी से खेलता है।

धूमिल समान अधिकारों की बात पर भी कटाक्ष करते है- वह कौन सा प्रजातांत्रिक नुस्खा है कि जिस उम्र में मेरी/माँ का चेहरा/झुर्रियों की झोली बन गया है/उसी उम्र की मेरे पड़ोस की महिला के चेहरे/पर मेरी प्रेमिका के चेहरे सा लोच है।

धूमिल की लेखनी मात्र व्यंग्य तक ही सीमित नही है, वे मानवाधिकारों के लिए संघर्ष का स्वर मुखर करते हैं कहते है- 'गीली मिट्टी की तरह हाँ

में हाँ मत करो/तनो/अकड़ों/अमर बेली की तरह मत जियों/जड़ पकडों/बदलो अपने आप को।

इसी क्रम में राजेश कुमार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और अधिकारों के प्रति सचेत करते हुए कहते है कि बोंलो चुप रहने वालो बोलो, खोलो मुँह पर पड़े ताले खोलो।

लिखो सामाज की सच्चाइयाँ लिखो, जानो जनता की समस्याएँ जानो।

उपसंहार

इस प्रकार सार रूप में देख तो मानवतावादी दृष्टिकोण, मानवाधिकारों के प्रति चेतना जगाने और उनका विस्तार करने का कार्य हर युग में साहित्य में किया गया। फिर चाहे कविता हो, कहानी हो, उपन्यास हों या साहित्य की अन्य कोई विधा। साहित्यकारों ने न केवल अन्याय के विरोध में भी पुरजोर तरीके से अपना स्वर मुखर किया अपितु मानवीय चेतना, मूल्यों, न्याय के पक्ष मे भी अपनी कलम चलाई। जयशंकर प्रसाद लिखते है

औरों को हँसता देख मनु हँसों और हँसाओं ।

अपने सुख को विस्तृत करके सबको सुखी बनाओं ।।

मानवाधिकारों के प्रति चेतना से साहित्य का गहरा नाता रहा है। दीन व शोषित की करूण पुकार से लेकर, शोषण के विरोध में पुरी ताकत से अवाज उठानें मे साहित्य ने अपनी विशिष्ट भूमिका निभाई है। फिर चाहे स्वतंत्रता से पूर्व की कष्टकारक परिस्थितियाँ हो अथवा पश्चात की द्वंद्वात्मक, उलझी सी परिस्थितियाँ। मानवाधिकार चेतना के विकास एवं विस्तार में साहित्य की सदैव ही सराहनीय भूमिका रही है। प्रत्येक राष्ट्र के उत्थान व विकास में इस भूमिका का विशेष योगदान रहा है। भविष्य में भी मानवाधिकार चेतना के माध्यम से समाज में क्रांति व परिवर्तन हेतु साहित्य की उल्लेखनीय भूमिका बनी रहेगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

रामधारी सिंह दिनकर -कुरूक्षेत्र

इस्पात भाषा भारती पृ.**04** दिसम्बर **1998**

हमे बोलने दो - सम्पादक सुभाष चैधरी पृ.**176**

बीसवीं शताब्दी का हिन्दी नाटक और रंगमंच- गिरीश रस्तोगी

अकाल दर्शन (संसद से सड़क तक) धूमिल पृ.**17**

कबीर समग्र

चतुर्वेदी जगदीश प्रसाद-दिनकर व्यक्तित्व एवं कृतित्व वर्ष **1977**- प्रवीण प्रकाशन

रामस्वरूप चतुर्वेदी- हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास

मानवाधिकार पत्रिका-2008 भोपाल, म.प्र. मानव अधिकार आयोग

मानवीय मूल्य और शिक्षा- अरूणा गोयल एवं एस.एल. गोयल